मीडिया बन रहा 'मनोरंजन उद्योग'!

राधेश्याम शर्मा*

मीडिया जनजीवन में शुरु से ही अत्यधिक प्रभावी रहा है। प्रचार का महत्व और दबदबा बढ़ने के साथ-साथ मीडिया का भी विस्तार हुआ। जीवन के सभी क्षेत्रों में इसकी ज्यादा जरूरत महसूस होने से यह ज्यादा असरदार एवं विकसित होता गया। विज्ञान और तकनीक के चमत्कारिक विकास से मीडिया का भी बहुआयामी विकास हुआ। सूचना-क्रांति एवं संचार क्रांति ने उसे नये आयाम दिए। शिक्षा के प्रसार, औद्योगिक क्रांति, आर्थिक विकास जनजागृति के साथ-साथ घटनाक्रम को जानने की लोगों की जिज्ञासा में तेजी से वृद्धि ने मीडिया को ज्यादा लोकप्रिय, उपयोगी एवं प्रभावी बनाया। रही-सही कसर वैश्वीकरण, बाजारवाद एवं उपभोक्तावाद ने पूरी कर दी। इप्रवृत्तियों एवं इनके विस्तार ने तो मीडिया के सारे हावभाव, तेवर एवं चरित्र को ही बदल दिया। मीडिया का यह बदलता रूप और उसके परिणाम (अथवा दुष्परिणाम?) गहराई से विचार के विषय हैं। वैश्वीकरण, बाजारवाद और उपभोक्तावाद का जो असर राजनीतिक, सामाजिक, साँस्कृतिक एवं आर्थिक जगत पर तथा मीडिया पर हो रहा है, उसने सारी सोच ही बदल दी है। सारे मापदंड बदल गए हैं। जीवन-मूल्य भी इनके शिकार हुए हैं और कई विचारधाराएं भी इनकी भेंट चढ़ गई हैं। मीडिया का तो नजरिया ही बदलता नजर आता है। लगता है मानो संवाद माध्यम आज नई चुनौतियों से जूझ रहा है। यह ज्यादा खतरनाक है, इसलिए इस पर विचार-मंथन जरूरी है। जहाँ समाज का एक वर्ग मीडिया का अधिकाधिक दोहन कर आर्थिक लाभ के पीछे दीवाना है, वहीं मीडिया के रचनात्मक रोल के समर्थक मीडिया में फिर से जीवन-मूल्यों, सामाजिक मूल्यों तथा मीडिया की नैतिकता एवं जवाबदेही के मुधे उठाने की पेशकश कर रहा है। उसे पुनः पटरी पर लाने को कटिबद्ध है।

ढाई सौ वर्षों का रोल

मीडिया का पिछले ढाई सौ वर्षो से अधिक का ऐतिहासिक रोल बहुत उल्लेखनीय और एक प्रकार से क्रांतिकारी रहा है। मीडिया इस लम्बी अवधि में अनेक राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक बदलावों एवं प्रगति का उत्प्रेरक रहा है। यह मानवता, जीवन के उच्च मूल्यों, मानव विकास, जनता की आजादी एवं उसके अधिकारों के पक्ष में तथा अन्याय, ज्यादती, दादागिरी, पिछड़ेपन, दकियानूसी सोच, गरीबी, शोषण, विषमता तथा गुलामी के खिलाफ संघर्ष और बलिदान का भी उत्प्रेरक रहा है। यह जनमत का प्रतिनिधित्व करता है ताकि सरकारें और समाज तथा उनके सत्ता-पद-धन-बाहुबल की शक्ति से सम्पन्न नेता भी और उन सबकी नीतियां भी सही राह पर चलें। बाहरी दबाव, प्रलोभन एवं भटकाव से बचे रहें। किसी के साथ अन्याय या भेदभाव नहीं हो। सर्वांगीण विकास की दौड़ में कोई व्यक्ति, समूह, वर्ग, इलाका पिछड़ने नहीं पाए। निर्दोष सुरक्षित रहें और दोषी बचने नहीं पाएं।

मीडिया का काम

मीडिया का काम है लोकतंत्र और इंसानियत को सुरक्षित रखना और उसे सतत जीवंतता एवं मजबूती देना। लोगों को सूचना देना और शिक्षित करना। स्वस्थ, संतुलित एवं सर्वांगीण विकास को गति देना। लोकतांत्रिक व्यवस्था में मीडिया का दायित्व यह देखना भी है कि यह व्यवस्था और इसके सारे अंग-प्रत्यंग सजग, पारदर्शी, समाज एवं देश के हितों के प्रति प्रतिबद्ध और जवाबदेह रहते हुए प्रगति की राह पर बढ़ते रहें। सबको न्याय भी मिले और विकास का अवसर भी मिले। मतदाता भी सजग, विवेकशील, किसी भी किस्म के लोभ-मोह-आकर्षण से अप्रभावित रहकर समाजहित, देशहित एवं उच्च मूल्यों को प्राथमिकता देने का माहौल बनाए रखने में सहयोग देते रहें। जनता के विचारों की अभिव्यक्ति की आजादी सुरक्षित रहे। शासन एवं जनता दोनों अधिकारों के साथ ही अपने कर्त्तव्य एवं दायित्वों के प्रति भी समर्पित रहकर कार्य करें। व्यक्तिगत, पारिवारिक, जातिगत स्वार्थो तथा राजनीतिक मतभेदों से सामाजिक एवं राष्ट्रीय हितों को प्रभावित या कमजोर नहीं होने दें।

संघर्ष व बलिदान का इतिहास

भारत में मीडिया का विकास आजादी के संघर्ष के दौरान हुआ। तब विदेशी सत्ताधारियों एवं उनके पिछलग्गुओं को छोड़ सारा मीडिया आजादी के संघर्ष से जुड़ा रहा तथा त्याग एवं बलिदान की

*वरिष्ठ पत्रकार एवं संस्थापक महानिदेशक माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय संस्थान

भावना से अपना दायित्व निभाता रहा। आजाद भारत एवं नागरिक अधिकारों के लिए पूरी निष्ठा से संघर्षरत रहा तथा सामाजिक उत्थान, समाज सुधार एवं पिछड़ेपन अथवा दकियानूसी सोच से लोगों को मुक्त करने के लिए माहौल बनाने में मीडिया की भूमिका बहुत सराही गयी। उसने देशभक्ति एवं देश प्रेम की भावना को जन-जन में पैदा करने तथा देश के लिए कुर्बानी का जज्बा पैदा करने में भारी योगदान दिया। तब पत्रकारिता मिशन थी। आजादी मिलने के बाद मीडिया की प्राथमिकता में देश का निर्माण यानी 'विकसित एवं गौरवशाली भारत' हो गया। मीडिया और पत्रकार विकास पत्रकारिता के प्रति प्रतिबद्ध हो गए। जनहित एवं राष्ट्रहित के प्रति प्रतिबद्ध हो गए। लोकतंत्र के सजग प्रहरी का दायित्व निर्वाह करना शुरु किया। सरकार या सामाजिक स्तर पर होने वाली गलतियों या भूलों को सामने लाने तथा सबको विकास एवं समान अवसर की गारंटी पर ध्यान देने में शक्ति लगायी। देश के नवनिर्माण के लिए जो भी योजनाएं, नीतियाँ, रणनीतियाँ, कार्यक्रम, अथवा विचारधाराएँ जनता के समक्ष पेश होती रहीं, उनके बारे में सही जानकारी देने और उनके सही क्रियान्वयन की जनता को सूचना देने का कार्य भी किया। विकास के रास्ते पर आने वाली अड़चना सरकारी या गैरसरकारी विफलताओं, प्रचार और असलियत, राजनीतिक, सत्तागत, सामाजिक, आर्थिक, क्षेत्रीय टकराव या उनके नतीजों के प्रति भी जनता को सूचना देने का कार्य भली प्रकार से चलता रहा। इस तरह मीडिया का विकास एवं प्रसार भी बढ़ता गया। प्रिंट के साथ-साथ इलेक्ट्रानिक मीडिया भी विकसित हुआ। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की तरक्की से जहां छपाई में क्रांति आयी वहीं अखबारों के रूप-रंग, साज-सज्जा, कलेवर आकर्षक हो गए। पठनीय सामग्री में विविधतभी आयी। सूचना क्रांति, संचार-क्रांति, कम्प्यूटर, सेटेलाइट, टीवी चैनलों की भरमार, वेबसाइट, लेपटाप, मोबाइल ने सारी जीवनशैली ही बदल दी है।

मीडिया को पाठकों दर्शकों की तलाश

अखबारों एवं उनके पाठकों की तथा टीवी चैनलों एवं उनके दर्शकों की संख्या में पिछले तीन दशकों में असाधारण वृद्घि के साथ ही वैश्वीकरण, बाजारवाद एवं उपभोक्तावाद के बढ़ते प्रभाव से देश की राजनीति, शासन, आर्थिक जगत, शिक्षा जगत, सामाजिक क्षेत्र अत्यधिक प्रभावित हुए और मीडिया भी उनकी चपेट में आया। यह मिशन से व्यापार, उद्योग, पूंजी निवेश का माध्यम और मुनाफा कमाने का उपक्रम बनता गया। उदारीकरण की आड़ में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के देश में बड़ी संख्या में प्रवेश से मीडिया और मीडिया कर्मी काफी संख्या में इससे प्रभावित होने लगे। अखबार को आमदनी, मुनाफे का जरिया और प्राडक्ट बनाने की होड़ लग गयी। ऐसे अखबार या पत्र-पत्रिकाएं बंद हो गयीं या कर दी गयीं जो लोकप्रिय तो थीं, किंतु उनमें मुनाफा कम था। उधर कारपोरेट जगत के हावी होने से बाजारवाद, न्यूज रूम में प्रवेश कर गया। ज्यादा मुनाफे के लिए विज्ञापन चाहिए और उसके लिए प्रसार संख्या बढ़ाना जरूरी है तो फिर सनसनीखेज खबरों, सेक्स और अपराध, फैशन परेडों, फिल्में एवं फिल्मी सितारों के एवं मनोहर एवं लालित्यपूर्ण समाचारों का पुट बढ़ता गया। उनके फोटोग्राफ या अधनंगे चित्रों की तादाद बढ़ने लगी। इस वैश्वीकृत औद्योगीकरण से सारा पर्यावरण नष्ट हो रहा है, जिससे जलवायु, वर्षा, मौसम प्रभावित हो रहे हैं। गंभीर खबरें, पर्यावरण की रक्षा, छोटे किसानों, मजदूरों, दूरस्थ ग्रामों, ग्रामीण जीवन, ग्राम विकास, खेती संबंधी समाचार उपेक्षित होने लगे। संचार क्रांति से युवा वर्ग कम्प्यूटर वेबसाइट में उलझ गया। डेटिंग, म्यूजिक डाउनलोड करने, ब्लागिंग, ब्रेकिंग न्यूज, ई-मेल, चैटिंग, खरीद-फरोख्तसूचना की खोज - नौकरी के लिए या प्रेमिका के लिए आदि मामलों में वह देश ही नहीं सारी दुनिया में उलझने लगा। आज के डिजिटल युग में अखबारों में ठोस व जनहित की खबरों के लिए जगह सिकुड़ने लगी। पत्रकारिता का स्वभाव और गुणात्मकता की बलि चढ़ गयी। गंभीर सामग्री की प्रस्तुति घटने लगी। अखबार में साहित्य एवं विचारपूर्ण सामग्री की मात्रा कम हो गयी। आनंद और मौज प्रमुख हो गए।

मीडिया का व्यावसायीकरण

मीडिया के व्यावसायीकरण एवं सनसनीकरण होने के साथ-साथ वह मनोरंजन का साधन बनने लगा। इससे खबरों की प्रस्तुति में नाटकीयता, प्रदर्शन की वृत्ति और आकर्षण का प्रवेश होने लगा। जो मीडिया संतुलित खबरों, पक्ष एवं विपक्ष की खबरों, असहमति के भी उद्गारों के प्रकाशन, खबर की विश्वसनीयता और खुलेपन के लिए सुपरिचित था, वहाँ अब कई क्षेत्रों की आवाजें दब गयी या उपेक्षित हो गयी। उपेक्षित, पीड़ित, कतार में पीछे खड़े व्यक्ति की आवाज को गुंजाने वाले मीडिया में धनी, प्रभावी, भ्रष्टाचारी, ताकतवर, साधन-सम्पन्न, माफियाओं, वोट बैंक पर हावी लोगों की आवाज गूंजने लगी। भ्रष्ट व अपराधी तत्वों के हावी होने से माहौल भी बिगड़ा। उचित, नीतिगत, तर्कसंगत, मानवीय, विचारों की आवाजें उपेक्षित होने लगीं। कई बड़े बहुसंस्करणीय अखबारों का दबदबा ज्यादा बढ़ा। उनकी सोच है कि नवधनाढ्य वर्ग और उनके युवा पाठकों का, उनके शौक का, उनकी भावनाओं का, मौज मस्ती व फैशनपरस्ती का ध्यान रखा जाए। वही उनके पाठक हैं इसलिए वे केन्द्र में हैं। किसान, मजदूर, आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग न तो खरीदेगा और न ही विज्ञापन देगा।

वे भी उपेक्षित हुए और उनकी समस्याएं भी। वही छपेगा या प्रसारित होगा, जो ग्राहक-दर्शक बढ़ाए या विज्ञापनदाता को आकर्षित करे।

बढ़ता विदेशी पूंजी निवेश

अर्थात् हालात ऐसे बनते गए कि मीडिया धीरे-धीरे बहुराष्ट्रीय कंपनियों एवं कारपोरेट जगत के प्रभाव में आता गया। जनहित की बजाय मुनाफा कमाने और नागरिकों की बजाए उपभोक्ता उसके आराध्य बन गया। मुनाफा ही मुख्य लक्ष्य बन गया। मीडिया में विदेशी पूंजी निवेश के जरिए विदेशी हित साधने एवं कई किस्म के नए-नए रूपों के साम्राज्यवाद की साजिशें शुरु हो गयीं। देशभक्ति, जीवन मूल्य, संस्कृति, विरासत, राष्ट्र-गौरव, देश की अस्मिता जैसी बातें पिछड़ गयीं। विज्ञापन के दृष्टिगत अब साहसिक रिपोर्टिंग और गलत तत्वों के खिलाफ हिम्मत से लिखने की प्रतिबद्धता कमतर हो गयी। पत्रकारिता के मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता की बजाए अखबारों एवं टीवी चैनलों में जो परोसा जा रहा है, वह बताता है कि मीडिया किधर जा रहा है? उसके मूल्य, निष्पक्षता, सिद्धांत एव निर्भीकता के दावे कहाँ गए?

व्यवसाय से मनोरंजन की ओर

एक बड़ा परिवर्तन मीडिया में आया इंटरनेट के प्रवेश के साथ। अब मीडिया को व्यावसायीकरण से मनोरंजन की तरफ ठेला जा रहा है। नई तकनीकी प्रगति इसमें मददगार हो रही है। लेपटाप और मोबाइल फोन भी मनोरंजन के साधन बन गये हैं। मोबाइल में टीवी, खबरें, फोटो खींचने, गाना सुनने आदि सभी का प्रवेश हो गया यानी सारी दुनिया मुट्ठी में। इससे अखबार पढ़ने, गंभीर पाठन की बलि हो रही है। आज का युवा वर्ग मनोरंजन के पीछे दीवाना है। अखबार और टीवी चैनल उसकी इच्छा पूरी कर रहे हैं। यह बीमारी भारत ही नहीं सारी दुनिया में है। अब अखबार पढ़ने वालों की संख्या घट रही है। विश्व समाचार पत्र संगठन (वर्ल्ड एसोसिएशन आफ न्यूजपेपर्स - वान) के सर्वेक्षण के अनुसार विकसित देशों में अखबारों (प्रिंट मीडिया) की प्रसार संख्या घट रही है और विकासशील देशों में बढ़ रही है। अमेरिका और पश्चिमी यूरोप में यह तेजी से घटी है। कई बड़े अखबार बंद हो गए हैं। प्रसार संख्या घटने एवं विज्ञापन की आय घटने से कई अखबार संकट में हैं। उनके लेखकों व स्तम्भकारों की बकाया राशि भी संकट में है। भारत में भी यही बीमारी प्रवेश करने लगी है। आधुनिक, सम्पन्न युवा वर्ग की जीवन शैली में अखबार पढ़ने का, गंभीर पाठन का समयाभाव है। वैश्वीकरण आज विश्वव्यापी पूँजीवाद, कारपोरेटीकरण नए साम्राज्यवादों को पनपा रहा है। जो उपभोक्ताओं को अपने प्रभाव में लाने के लिए झंडे या विचारधारा की बजाय अपने ब्रांडों का और प्रॉडक्ट का इस्तेमाल कर रहे हैं। उपभोक्ताओं को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने की यह साजिश ध्यान देने और सचेत करने के लिए काफी है। वैश्वीकरण का यह राजनीतिक चेहरा दिखने में भले सामान्य दिखे, पर खतरनाक है। सम्पन्न एवं आकर्षक दिखने और दिखाने वाला उसका दांव प्रतिभा पलायन और आबादी के पलायन को बढ़ावा दे रहा है। इससे बिखराव एवं अपनी जमीन से कटने की हवा तेजी से चल पड़ी है। भारत में एवं अन्यत्र उनके समर्थक गिरोह अपना शिकंजा कस रहे हैं। विदेशी पूँजी के विनियोजन के साथ-साथ निजीकरण तेजी से बढ़ रहा है। समाजवाद और राष्ट्रीयकरण की उल्टी प्रक्रिया शुरु हो गयी है। सभी ओर फिर से पूँजीवाद बढ़ रहा है, जिसके लिए सारी दुनिया में बड़ा संघर्ष हुआ और तथाकथित रक्तिम क्रांतियां हुई। मुनाफे, घाटा कम करने, स्वतंत्रता, कार्यकुशलता एवं प्रतिस्पर्धा की आड़ में सरकारी उपक्रमों का निजीकरण बड़ी संख्या में आयीं बहुराष्ट्रीय कंपनियों (अर्थात् ढेर सारी इंडिया कंपनियों) को बढ़ावा दे रहा है। यह भी गौर करने लायक विषय है कि इनका अथाह धन किस तादाद में आतंकवदियों, पृथकतावादियों, साम्राज्यवादियों के एजेंटों, देश के बिखराव या विखंडन में रुचि रखने वाले तत्वों के पास पहुंच रहा है। अरबों रुपए का मुनाफा विदेशों को जा रहा है। मीडिया इन खतरों एवं इनके हथकंडों के प्रति कितना जागरूक एवं सक्रिय निर्भीक एवं मुखर है? बाहरी लोग देश पर छा रहे हैं, उनके प्रति मीडिया कितना सजग है

भीमकाय दानव व मगरमच्छ

सवाल जरूर उठता है कि मीडिया इन खूंखार और बड़े-बड़े मगरमच्छों के खिलाफ कलम क्यों नहीं चलाता जो अपनी पूँजी के बल पर कई देशों के बाजारों पर कब्जा जमा रहे हैं और भारत सहित कई देश विदेशी पूँजी निवेश को बढ़ावा देने में लगे हैं? एक खबर यह भी है कि अब चीन की कंपनियां भी भारत में सक्रिय हैं। माओवाद की तरह उनका प्रभाव भी बढ़ रहा है - यह तथ्य काफी कुछ कहता है। ऐसे हालात में विदेशी मीडिया बहुराष्ट्रीय कंपनियों का यहां के मीडिया जगत में पूँजी निवेश बढ़ने के कारणों एवं परिणामों पर गंभीरता से ध्यान देना जरूरी है। वैश्वीकरण और उदारीकरण की आड़ में भीमकाय दानवों के विशाल कारखाने और कारपोरेशन सक्रिय हैं। ये तत्व मुनाफे की वृद्धि के साथ में दैत्याकार और जंगी जहाजी बेड़ों की तरह सर्वत्र छा रहे हैं। इसके परिणामों या दुष्परिणामों से देश व दुनिया को सजग करने वाला मीडिया क्या मनोरंजन कदांव का शिकार हो जाएगा? क्या कलम नहीं चलाएगा? क्या वह इस भय का शिकार है कि मनोरंजन नहीं करेगा तो खत्म हो जाएगा?

पूँजी द्वारा साँस्कृतिक साम्राज्यवाद

ये जंगी जहाजी बेड़े और इनकी पूँजी मीडिया को विज्ञापन एवं पूँजी निवेश के जरिए अपने प्रभाव में लेकर अपने प्रॉडक्ट की बिक्री बढ़ाने के लिए सारी संस्कृति एवं जीवनशैली को बदलने में जुटे हैं। विश्वव्यापी विज्ञापन कंपनियां इनके प्रॉडक्ट को विज्ञापन द्वारा साँस्कृतिक साम्राज्यवाद की मदद कर रही हैं। कई बैंकों का आपस में विलय एवं प्रायवेट बैंकों का विदेशी बैंकों से तालमेल भी ध्यान देने लायक मामला है। देश में कारों, बड़े-बड़े आलीशान मकानों, बड़े-बड़े माल, कीमती आधुनिक जेवरात, नई फैशन, नए डिजाइन के नये-नये रोज बदलते आकर्षक कपड़े, फैशन, फैंसी फर्नीचर और इस तरह भौतिकवादी जीवन शैली को बढ़ावा इस वैश्वीकरण एवं उदारवाद की देन है, जो मीडिया के जरिए अपना जाल फैला रही है। उन्हें सिर्फ अपने सम्पन्न उपभोक्ता का ध्यान है। रही सही कसर फास्ट फूड शैली पूरा कर रही है जिसके पीछे सम्पन्न युवा वर्ग दीवाना है। गरीब, बड़े-बड़े मालों की खरीददारी में असमर्थ लोगों या देश व सामाजिक मूल्यों के प्रति कट्टरता से समर्थित लोग झुग्गी झोपड़ियों में रहने वालों, वनवासियों, अकुशल मजदूरों को वे अपनी सूची से बाहर रखते हैं। कारण यह है कि वह उनका ग्राहक नहीं है। अपने धंधे और प्रॉडक्ट को बेचने में वे मीडिया को उपभोक्तावाद और मनोरंजन के कार्य में अथवा पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में लाने में जुटे हैं और दूसरी ओर मिशन वाला मीडिया धीरे-धीरे दरकिनार हो रहा है। कम ही अखबार व पत्रकार मूल्यों के प्रति प्रतिबद्ध रह पाते हैं। युवा वर्ग को फैशन एवं मौजमस्ती के साथ-साथ सही शिक्षा, मार्गदर्शन, बुद्धिमता, विवेकशीलता, प्रशिक्षण एवं दूरदर्शिता की ओर उन्मुख करना क्या मीडिया की जिम्मेदारी नहीं है?

मीडिया और मनोरंजन का कमाल

मीडिया और मनोरंजन का ही कमाल है कि छोटे बच्चे कार्टूनों, कार्टून फिल्मों में घंटों लगे रहते हैं। समझाने पर उग्र हो जाते हैं। गंभीर चिंतन एवं सामग्री उनके लिए 'पुरातन', 'पोंगापंथी', आउटडेटेड यानी पिछड़ेपन की प्रतीक है। जीवन में मनोरंजन हावी है। टीवी चैनलों पर फैशन परेडें, शृंगार साधन संबंधी विज्ञापन, अपराध संबंधी या परिवार तोड़नेवाले सीरियलों की भरमार है। अपना माल बेचना है और लोगों को आकर्षण में खोए रखना है। चैनलों में युवतियों के बदन से घटते कपड़े एवं बदन दिखाने का चलन ऐसे माहौल का साक्षी है।

इसमें शक नहीं कि मीडिया में ऐसा युवा वर्ग भी आया है, जिसने अपनी काबिलियत, प्रखरता, कुशलता, लेखन की विविधता का परिचय दिया है किंतु मीडिया पर बड़े सम्पन्न घरानों, कारपोरेट सेक्टर और बाजारवाद के आगे वह कई बार चाहकर भी वह कुछ नहीं कर पाता है। उसकी आवाज को स्वर नहीं मिलता।

मीडिया बना 'मनोरंजन उद्योग'

हालत यह है कि वैश्वीकरण के इस दौर में मीडिया 'मनोरंजन उद्योग' का हिस्सा बनता जा रहा है। सेक्स, अश्लीलता और अपराध भी मनोरंजन के हिस्से बना दिए गए हैं। यही कारण है कि हमारे अखबार, पत्र-पत्रिकाएं एवं चैनल अपराध संबंधी सीरियलों, अधनंगे मॉडलों, फिल्मी सितारों के चित्रों से भरी रहती हैं। भीड़ जुटाने वाले नामवर व्यक्ति ज्यादा दिखाए जाते हैं। अंधाधुंध इश्कबाजी और खुली चूमाचाटी दिखाने से अब परहेज नहीं है। बाथरूम और बेडरूम, दफ्तरों में रोमांस के दृश्य, घर से एक रात गोल मारने के दृश्यों का प्रदर्शन आम बात हो गयी हैं। कभी-कभी कुछ सीरियल या कुछ अखबार या मेगजीन आप बच्चों के साथ देखने में हिचक जाते हैं। सेक्स संबंधी सर्वेक्षण की खबरें काफी आने लगी हैं। शिक्षण संस्थाओं की इस तरह की खबरें और घटनाओं को उछालने की मनोवृत्ति चौंकाती है। धनी, सम्पन्न या प्रभावशाली लोगों के छिछोरेपन का मीडिया में प्रदर्शन क्या देश की संस्कृति और गरिमा से मेल खाता है? पर इस पर ध्यान देने की फुरसत किसे है? इसके आगे बढ़कर मोबाइल पर 'एस एम एस' में घटिया और छिछले किस्म के चुटकुले आम बात हो गयी है। कुछ चैनल नंगी फिल्में दिखाने में सक्रिय हैं। इस तरह वे किस वर्ग की सेवा या तीमारदारी कर रहे हैं? लगता है फिल्म सेंसर बोर्ड या तो निष्क्रिय है या वह प्रभावहीन बना दिया गया है। सामाजिक मर्यादाएं या रिश्तों की गरिमा को अभिव्यकी आजादी के नाम पर बलि चढ़ा दिया गया है। क्या यह मीडिया का सदुपयोग हो रहा है? नई पीढ़ी पर और बच्चों पर ऐसे चित्रों, सीरियल, विज्ञापनों, फिल्मों का क्या असर हो रहा है? इसका ध्यान यदि मीडिया नहीं रखेगा तो कौन रखेगा? कई माता-पिता ऐसी मेगजीन या अखबार घर में लाना पसंद नहीं करते। महिलाओं के साथ बढ़ते अपराध संबंधी घटनाओं को ज्यादा विस्तार से और उसे ज्यादा चटपटी एवं आकर्षक बनाकर छापने या प्रदर्शित करने का चलन बढ़ गया है। इसके सामाजिक असर की चिंता किसे है?

मीडिया का भटकाव या मजबूरी?

मनोरंजन एवं दिल बहलाव में मीडिया का उपयोग या दुरुपयोग खतरनाक है। जो अच्छी व्यवस्था लाने के लिए पैदा हुआ, विकसित हुआ, ताकतवर हुआ, प्रभावी हुआ वह क्यों भटक गया या मजबूर हो गया? क्या वह मालिकों, मुनाफे, अच्छे वेतनमान, केवल व्यवसाय में ही उलझकर रह गया है? यदि मीडिया ही झुक गया या हालात से

समझौता कर गया तो देश का क्या होगा? वैसे भी 'मीडिया बिकाऊ', पैकेज खबरें बनी विज्ञापन की चर्चाएं चौंकाने वाली हैं।

मीडिया को कब्जाने की कोशिशें

वैसे दुनिया का इतिहास बताता है कि मीडिया पर कब्जा करने की कोशिशें भी सदैव होती रही हैं। सत्ताधीश, शासन-तंत्र, धनाढ्य, माफिया वर्ग, दादागिरी या आतंकवादी इस परहावी होने की कोशिश करते रहे हैं। पूरे सोवियत रूस में किसी समय केवल दो ही अखबार निकलते थे - एक सरकार का और एक कम्युनिस्ट पार्टी का। उनमें सरकार के खिलाफ कुछ नहीं छप सकता था। अब कुछ बदलाव है जबसे कम्युनिस्ट पार्टी व उसकी सत्ता खत्म हुई है। हिटलर के खास साथी गोबेल्स का कहना था कि 'एक झूठ को सौ बार बोलने पर वह सच हो जाता है।' प्रचार का यह असर होता है, इसलिए मीडिया पर कब्जा करने की कोशिशें होती हैं। विज्ञापन एवं धनबल या दादागिरी भी उसकी स्वतंत्रता को दबाने या सिकोड़ने के साधन हैं। मीडिया व पत्रकार को खरीदने की साजिशें होने लगी हैं। आज बाजारवाद हावी है। विलासितापूर्ण जीवन बिताने की होड़ लगी है। इसलिए किसी भी तरह धन कमाओ और मौज करो। यानी भोजन, धन, विलासिता और मौजमस्ती ही जीवन का लक्ष्य बन गये हैं। ऐसे हालात में प्रकाशक और मालिक की अखबारी एवं अभिव्यक्ति की आजादी के आगे नागरिक की सच्चाई जानने की आजादी और इसका अधिकार मानो दरकिनार हो गए हैं। शायद इसीलिए बाजारवाद की आंधी में हमारी जरूरतें, बुनियादी समस्याएं, खेती संबंधी संकट, ग्रामीण एवं वनवासी जनजीवन की आहें-कराहें, नये पूँजीवाद से समाज में बढ़ती शोषण, विषमता की बीमारी, बढ़ती विकराल महंगाई, देशहित, समाजहित, अस्मिता-संस्कृति सब की खबरों की बजाए दिग्गजों और उनकी फैशन परेडों, फिल्मों तथा विलासी जीवन की खबरें हावी हैं। आज मीडिया का सम्पादकीय विभाग दूसरे दरवाजे पर आ रहा है और विज्ञापन विभाग का दबदबा बढ़ा है।

मनोरंजन बना 'अफीम'!

मनोरंजन, मुनाफा और पूँजी के इस ग्रहण से बाहर निकलने की चुनौती मीडिया और मीडिया कर्मियों के सामने आज है। आजादी के संघर्ष की तरह नया संघर्ष - आज की जरूरत है। किसी समय कार्ल मार्क्स ने धर्म को अफीम बताया था और कहा था कि सम्पन्न तथा प्रभावी लोग इसका इस्तेमाल जनता को भरमाने और अपने स्वार्थ साधने में करते हैं। आज वैश्वीकरण, उदारवाद, बाजारवाद, उपभोक्तावाद का दैत्य, विलासिता का आकर्षण एवं मनोरंजन तथा मुनाफावाद अफीम के रूप में प्रयोग करके लोगों को भरमाने और उनके शोषण में लगा है। कैसी गंभीर एवं खतरनाक स्थिति है?

बाजार के अर्थ बदल गए

लगता है कि जीवन के और बाजार के सारे अर्थ ही बदल गए हैं। पहले मांग और पूर्ति (डिमांड एंड सप्लाई) की बात होती थी। जनता की मांग के अनुरूप उत्पादन होता था। अब लोगों का नजरिया मीडिया की मदद से बदला जा रहा है। उन्हें बताया जा रहा है कि वे क्या खाएं, क्या पीएं, क्या पहनें, कैसा पहनें, ताकि बहुराष्ट्रीय कंपनियों का माल बिक सके। उनका धंधा चलता रहे, इसलिए ऐसा सम्प्रेषण या प्रदर्शन हो रहा है। ताकि उनके माल की मांग पैदा हो। यह बनावटी मांग की हवा बनायी जा रही है। अखबारों को, मैगजीनों को चिंता है कि उनकी प्रसार संख्या बढ़े। टीवी चैनल पाठकों की संख्या बढ़ाने में जुटे हैं। तभी तो विज्ञापन ज्यादा मिलेंगे और मुनाफा होगा। इसलिए अपने जीवन मूल्यों की धज्जियां उड़ाने, अपने सांस्कृतिक मूल्यों को ध्वस्त करने या लोकाचार को तोड़ने-मरोड़ने वाले मीडिया के प्रकाशन अथवा प्रदर्शन की उन्हें कोई चिंता नहीं है। मनोरंजन की आड़ में यह कैसा खेल चल रहा है? धर्म, संस्कृति, चरित्र, नैतिक मूल्य क्या सब दरकिनार हो जायेंगे? धर्मो, पंथों एवं मजहब के मठाधीश भी मीडिया के उपयोग में लगे हैं लेकिन उससे समाज का चरित्र कितना ऊंचा उठ रहा है? कभी-कभी लगता है कि कुछ तत्व धर्म-पंथ-मजहब की आड़ में धनसंग्रह और ठाठ-बाट के शिकार हो रहे हैं।

मीडिया के समक्ष पुनः बड़ी चुनौती

दरअसल बहुसंस्करणीय अखबारों, बड़े-बड़े अखबारी घरानों एवं कारपोरेट क्षेत्र द्वारा संचालित अथवा मात्र मुनाफे के लिए मीडिया जगत में प्रविष्ट मीडिया के दिग्गज आज मीडिया पर हावी हैं। आज संपादक नाम की संस्था का दर्जा दोयम हो गया है। उसकी आजादी सिकुड़ गयी है। अखबार व चैनलों पर विचार, निष्पक्षता, संतुलित एवं विश्वसनीय सामग्री की बजाए व्यवसायवाद और मुनाफावाद हावी है। इसीलिए सत्ताधारी वर्ग या विज्ञापनदाता की स्वस्थ आलोचना भी अब दुर्लभ हो गयी है। पूंजी और आमदनी ही सर्वोच्च हो गए हैं। आज मीडिया में देश और दुनिया को बदलने, अव्यवस्था से संघर्ष, राजनीतिक या आर्थिक साम्राज्यवाद के शोषण, धन या मुनाफे के लिए अंधे दादाओं के दबदबे के खिलाफ संघर्ष का माद्दा जगाने की जरूरत है। युवा वर्ग को राष्ट्र-निर्माण की ओर उन्मुख करने की भी जरूरत है। मीडिया और उसके समर्पित मूल्यों की स्थापना के प्रयास चल रहे हैं, मगर कम हैं। कलम के सिपाहियों के सामने बड़ी चुनौती है। मीडिया को मनोरंजन के शिकंजे से बचाकर उसके पुराने सशक्त, निर्भीक, स्वाभिमानी, देशाभिमानी, जनसेवी चरित्र को पुनः स्थापित करने की जरूरत है।